**<u>उत्तराखण्ड उच्च न्यायालय, नैनीताल।</u>**

**फौजदारी पुनरीक्षण संख्या–236 सन् 2010**

महेश यादव ..... *पुनरीक्षणकर्ता*

बनाम

उत्तराखण्ड राज्य और अन्य। ..... प्रतिवादीगण

श्री लोकेन्द्र डोभाल, एडवोकेट– पुनरीक्षणकर्ता के अधिवक्ता।

श्री सचिन पंवार, उत्तराखण्ड राज्य के ब्रीफ होल्डर/प्रतिवादी संख्या–01.

श्री पवन मिश्रा, प्रतिवादी संख्या–02 के अधिवक्ता

**<u>दिनांक 17 नवम्बर, 2018</u>**

**<u>निर्णय</u>**

**<u>माननीय शरद कुमार शर्मा, जे0</u>**

विवाद के तथ्यात्मक पहलुओं पर विचार करने से पहले, जो पुनरीक्षण न्यायालय के दिनांक 02 नवम्बर, 2010 के आदेश से उत्पन्न होता है, जिसे वर्तमान फौजदारी संशोधन में चुनौती दी गयी है, ऐसे बिन्दुओं को तैयार करना आवश्यक हो जाता है, जिन्हें इस न्यायालय द्वारा निपटाया जाना आवश्यक है। ताकि उठाये गये मुद्दों को हल करने और निर्णय देने के लिए एक तर्क संगत निर्णय पर पहुंचा जा सके। जिन मुद्दों से निपटने की आवश्यकता है वे निम्न हैं–

1. क्या धारा–133 दण्ड प्रक्रिया संहिता के तहत कार्यवाही एक आपराधिक प्रकृति की कार्यवाही है, जो धारा–362 दण्ड प्रक्रिया संहिता के उपबन्धों के द्वारा लगाये गये प्रतिबन्ध से रिकॉल प्रार्थना पत्र को दाखिल करने से रोक देगी।

2. यदि धारा–133 सी0आर0पी0सी0 की कार्यवाही को एक दीवानी और संक्षिप्त कार्यवाही माना जाता है, तो क्या वह कार्यवाही में पारित एकपक्षीय आदेश को वापस लेने की मांग करते हुए रिकॉल प्रार्थना पत्र को दाखिल करने की अनुमति देती है।

2. वर्तमान मामले में तथ्य इस प्रकार बताया गया है कि

प्रश्नगत सम्पत्ति खाता संख्या–685, खसरा संख्या–14–ए, जिसका क्षेत्रफल 0.0120 हे0 है, जिसका नया खसरा संख्या–14 या (14/2), इसके बाद इसे विवादित सम्पत्ति के रूप में संदर्भित किया जायेगा, जिसे पर प्रतिवादी द्वारा एक सार्वजनिक मार्ग होने का दावा किया जाना है।

3. जबकि, दूसरी ओर, पुनरीक्षणकर्ता का दावा है कि प्रारम्भ में, प्रश्नगत सम्पत्ति, सत्यप्रकाश नामक भूमिधर के नाम दर्ज थी, इस न्यायालय के समक्ष पुनरीक्षणकर्ता का दावा है कि सत्यप्रकाश ने दिनांक 08.04.2002 के एक पंजीकृत विक्रय विलेख निष्पादित कर उसके पक्ष में कुछ जमीन बेची थी और फलस्वरूप विक्रयनामा अपने पक्ष में निष्पादित कर राजस्व अभिलेखों में स्वयं का नाम दर्ज करवा लिया और नायब तहसीलदार द्वारा पारित आदेश संख्या–1859 दिनांक 19 सितम्बर, 2002 के आधार पर पुनरीक्षणकर्ता का नाम श्रेणी–1क अर्थात् भूमिधर के रूप में संक्रमणीय अधिकार के साथ दर्ज हो गया। उपरोक्त कथनों के समर्थन में, उसने फसली वर्ष 1416 से 1421 से सम्बन्धित खतौनी को प्रस्तुत किया।

4. 10 दिसम्बर, 2004 को प्रतिवादी संख्या–02 के पिता स्व0 श्री छोटे लाल, ने परगना मजिस्ट्रेट के समक्ष उक्त आशय का एक आवेदन पत्र दाखिल करके सी0आर0पी0सी0 की धारा–133 के अन्तर्गत कार्यवाही शुरू की थी, जिसमें उन्होंने प्रार्थना की है कि जो भूमि पुनरीक्षणकर्ता द्वारा क्रय की हुई बतायी जा रही है, वास्तव में वह एक सार्वजनिक रास्ता है, जिस पर वर्तमान पुनरीक्षणकर्ता द्वारा बाधा उत्पन्न किये जाने का प्रयास किया जा रहा है और इसलिए धारा–133 के तहत परगना मजिस्ट्रेट से प्रार्थना की कि पुनरीक्षणकर्ता को बाधा उत्पन्न करने से रोका जा सकता है, यदि बाधा पहले ही किया जा चुका है तो उसे तुरन्त हटा लिया जा सकता है।

5. उक्त आवेदन पर संज्ञान लेते हुए परगना मजिस्ट्रेट ने थाना प्रभारी क्लेमेण्टाउन, देहरादून से आख्या तलब की, उन्होंने मामले की जांच कर दिनांक 11 दिसम्बर, 2004 को आख्या प्रस्तुत की, जिसमें उन्होंने स्थानीय जांच की गयी, जिसमें तथाकथित मार्ग पूरे तरीके से अवरूद्ध बताया गया है। आख्या के आधार पर परगना मजिस्ट्रेट ने 14 दिसम्बर, 2004 को प्रारम्भिक आदेश पारित किया, जिसमें पुनरीक्षणकर्ता को 15 दिनों की अवधि के भीतर बाधा को हटाने या 28 दिसम्बर, 2004 तक कारण बताओ नोटिस जारी करने का निर्देश जारी किया। इसी स्तर से वास्तविक विवाद उत्पन्न होता है, क्योंकि जो नोटिस दिनांक 14 दिसम्बर, 2004 को

परगना मजिस्ट्रेट द्वारा भेजा गया था, वह वर्तमान पुनरीक्षणकर्ता पर तामील नहीं हुआ बताया गया है और इसलिए, उनका तर्क है कि दिनांक 10.12.2004 को धारा–133 दण्ड प्रक्रिया संहिता के तहत आवेदन दाखिल करके प्रतिवादी संख्या–02 के पूर्ववर्ती द्वारा रिपोर्ट प्रस्तुत करने के बाद की गयी पूरी कार्यवाही उसके विरूद्ध एकपक्षीय थी। प्रतिवादी संख्या–02 के इशारे पर यह धारा–133 के तहत कार्यवाही की जा रही है, इस तथ्य को मजबूत करने के लिए उन्होंने एक संलग्नक संख्या–6 भी प्रस्तुत किया है, जो दुकान पर नोटिस चस्पा करने के माध्यम से प्रतिवादी द्वारा अपनायी गयी तामीली का तरीका है, जिस पर दो व्यक्तियों का चस्पा किये जाने का अनुमोदन है।

6. पुनरीक्षणकर्ता के विद्वान अधिवक्ता का वर्तमान रिकॉल प्रार्थना पत्र के सम्बन्ध में तर्क है कि तथ्यात्मक रूप में चस्पा की रिपोर्ट प्रतिवादी संख्या–2 ने चौकी डिफेन्स कालोनी क्लेमेन्टाउन के पुलिस अधिकारी से मिली भगत कर फर्जी रिपोर्ट उक्त परगना मजिस्ट्रेट के समक्ष प्रस्तुत की गयी।

7. परगना मजिस्ट्रेट ने नोटिस की तामील के सम्बन्ध में पुलिस अधिकारियों द्वारा दी गयी रिपोर्ट पर कार्यवाही करते हुए तामीली की रिपोर्ट को पर्याप्त माना था और 29 जनवरी, 2005 को अंतिम आदेश पास किया था, जिसमें पुनरीक्षणकर्ता को बाधा हटाने का निर्देश दिया गया था। एस0एच0ओ0 ने अपनी रिपोर्ट दिनांक 11.12.2004 में कथित बाधा के बारे में बताया, न्यूसेन्स न हटाने पर परगना मजिस्ट्रेट ने निर्देश दिया कि उसके खिलाफ धारा–188 के तहत दण्डात्मक कार्यवाही की जायेगी।

8. दिनांक 29 जनवरी, 2005 के आदेश के आधार पर 11.02. 2005 को एस0डी0एम0 द्वारा तैनात ऐजेन्सी द्वारा न्यूसेन्सों को हटाने के लिए कदम उठाये गये थे। पुनरीक्षणकर्ता का कथन है कि उसे दिनांक 29.01.2005 के आदेश और दिनांक 14.12.2004 के तामीली के तरीके के सम्बन्ध में बाद में पता चला। उसके लिए आवश्यक हो गया था कि रिकॉल प्रार्थना पत्र आदेश दिनांक 29. 01.2005 व 11.02.2005 के सम्बन्ध में 18.02.2005 को दाखिल करे। उसका इस आधार पर विरोध किया गया था, जो कि धारा–133 दण्ड प्रक्रिया संहिता के तहत कार्यवाही की गयी है और दण्ड प्रक्रिया के तहत कार्यवाही पर सी0आर0पी0सी0 की धारा–362 के प्रावधानों के अन्तर्गत कोई समीक्षा या रिकॉल पोषणीय नहीं होगा।

9. उप मण्डल मजिस्ट्रेट ने रिकॉल प्रार्थना पत्र और उस तरीके

पर विचार करते हुए, जिससे रिकॉल प्रार्थना पत्र में लिए गए आधार से संतुष्ट होने पर नोटिस तामील माने गये थे। आदेश दिनांक 3 मार्च, 2006 के आदेश द्वारा कार्यवाही बन्द कर दी। इस आदेश से व्यथित होकर प्रतिवादी संख्या–02 ने एक फौजदारी पुनरीक्षण संख्या–19 सन् 2006 छोटे लाल बनाम उत्तराखण्ड राज्य और अन्य बनाम प्रस्तुत की, वह पुनरीक्षण न्यायालय के आदेश दिनांक 02 नवम्बर, 2010 के स्वीकार की गयी। आदेश दिनांक 03. 03.2010 को अपास्त कर दिया गया। इसके परिणामस्वरूप आदेश दिनांक 29.01.2005 और 11.02.2005 के बाधाओं को दूर करने का आदेश दिया गया था।

10. पुनरीक्षणवादी ने वर्तमान पुनरीक्षण में दिनांक 02.11.2010 के अपेक्षित आदेश को चुनौती देते हुए कई तर्क दिये। एक मुख्य तर्क यह दिया कि पुनरीक्षण न्यायालय द्वारा लिया गया दृष्टिकोण रिविजन स्वीकार करने और दिनांक 03.03.2010 के आदेश को रद्द करना स्वीकार नहीं है, क्योंकि उन्होंने कथन किया कि धारा 133 सी0आर0पी0सी0 की कार्यवाही सिविल प्रकृति की है तो यह संक्षिप्त प्रकृति की है तो पारित किये गये किसी भी आदेश को पारित करने वाले अधिकारी द्वारा वापस लिया जा सकता है।

11. जबकि दूसरी ओर, प्रतिवादी के विद्वान अधिवक्ता पवन मिश्रा द्वारा दिया तर्क यह है कि पुनरीक्षणकर्ता के अधिवक्ता का तर्क है कि धारा 133 दण्ड प्रक्रिया संहिता की कार्यवाही सिविल कार्यवाही का आकार लेती है, तर्क संगत नहीं है, क्योंकि दण्ड प्रक्रिया संहिता की कार्यवाही प्रारम्भ में ही फौजदारी की प्रकृति की होती है। विधि के न्यायालय द्वारा ही दी गयी व्याख्या के अनुसार यह संक्षिप्त प्रकृति की है। सम्पत्ति से सम्बन्धित होने के कारण इसकी प्रकृति में कोई प्रभाव नहीं पड़ेगा। उन्होंने यह भी कथन किया कि विद्वान अतिरिक्त जिला जज/एफ0टी0सी0 II देहरादून के फौजदारी पुनरीक्षण संख्या–19 सन् 2006 दिनांक 02.11.2010 छोटे लाल बनाम उत्तराखण्ड राज्य और अन्य में किसी हस्तक्षेप की आवश्यकता नहीं है।

12. पुनरीक्षणकर्ता के तर्कों के जवाब में, श्री पवन मिश्रा, प्रतिवादी संख्या 2 के विद्वान वकील ने अपने तर्कों का समर्थन करने के लिए कि रिकॉल प्रार्थना पत्र आवेदन पोषणीय नहीं होगा, इस न्यायालय की समन्वय पीठ द्वारा दिए गए निर्णय को प्रस्तुत किया है। **रूस्तम बनाम मैनफेयर और अन्य ने 2006 (2) यूडी, 597** में, उन्होंने निर्णय के पैरा 5 और 6 की अर्न्तवस्तु का उल्लेख करते हुए, जो यहां उल्लिखित किए गए हैं, उन्होने कहा कि समन्वय बेंच ने विशेष रूप से एक अंतर निकाला है कि एक बार जब धारा 133

सी0आर0पी0सी0 के तहत कार्यवाही होती है, रिकॉल प्रार्थना पत्र पर उस स्थिति में, धारा 362 द्वारा बनाया गया प्रतिबंध लागू होगा, जिस पर दिनांक 03.03.2010 के आदेश को मान्य नहीं माना गया था, परिणामस्वरूप उक्त पुनरीक्षण को खारिज कर दिया जाना चाहिए। फैसले के पैरा 6 और 7 इस प्रकार हैः–

''6'' इस पुनरीक्षण में एकमात्र बिंदु यह है कि क्या मजिस्ट्रेट जिसने 133 सी0आर0पी0सी0 के तहत पूर्ण आदेश दिया था। और पुनरीक्षण को निर्देश दिया कि मार्ग से बाधा को दूर किया जा सकता है ओर सी0आर0पी0सी0 के तहत फिर से सुनवाई के लिए बहाल किया जा सकता है। यह भी तय किया जाना है कि एक बार प्रतिवादी के पक्ष में कार्यवाही समाप्त कर दी गयी थी कि क्या उस कार्यवाही को बाद के आदेश से अलग रखा जा सकता है। सी0आर0पी0सी0 की धारा 362 निम्नानुसार प्रदान करती हैः–

''अदालत फैसले में बदलाव नहीं करेगी। इस संहिता या कुछ समय के लिए किसी अन्य कानून द्वारा अन्यथा प्रदान किये गये प्रावधान को छोडकर कोई भी अदालत जब उसने अपने निर्णय या किसी मामले के निपटान के अंतिम आदेश पर हस्ताक्षर किये हैं तो एक लिपिक या अंकगणितीय त्रुटियों को ठीक करने के अलावा।'' उसमें परिवर्तन या समीक्षा नहीं करेंगे।

7. उपरोक्त प्रवधान के अवलोकन से स्पष्ट रूप से पता चलता है कि एक बार निर्णय और आदेश दिये जाने या आदेश पर हस्ताक्षर करने के बाद, लिपिकीय त्रुटियों को छोडकर इसे बदला नहीं जा सकता है। विद्वान सत्र न्यायाधीश ने यह अभिनिर्धारित करते हुए न्यायसंगत ठहराया कि विद्वान मजिस्ट्रेट ने दिनांक 04.01.1996 के आदेश को अपास्त करने में त्रुटि की है। पुनरीक्षणकर्मा के पास पुनरीक्षण दाखिल करने या सी0आर0पी0सी0 के तहत कोई उचित कदम उठाने का उपाय था। विद्वान मजिस्ट्रेट के द्वारा पारित आदेश के खिलाफ धारा 136 सी0आर0पी0सी0 में विद्वान सत्र न्यायधीश द्वारा पारित निर्णय और आदेश में अवैधता नहीं पाता।''

13. इसके जवाब में, पुनरीक्षणकर्ता के वकील ने प्रस्तुत किया कि प्रत्यर्थी के विद्वान वकील द्वारा दिए गए तर्क विश्वास योग्य नहीं हो सकता है क्योंकि प्रावधानों की प्रकृति और विशेष रूप से, के इरादे को देखते हुए धारा 133 सी0आर0पी0सी0 इसका उद्देशय एक सार्वजनिक संपत्ति पर एक सार्वजनिक बाधा की रक्षा करना है, और उक्त उद्देश्य के लिए, उक्त प्रावाधानों के तहत शक्ति जिला मजिस्ट्रेट/एसडीएम के पास निहित किया गया है। इसलिए यह एक कार्यकारी शक्ति के प्रयोग के रूप में लेता है

इसलिये यह दीवानी कार्यवाही का रूप ले लेता है। यदि धारा 133 की भाषा सी0आर0पी0सी0 को सटीक रूप में पढा जाता है तो इसका उद्देशय किसी व्यक्ति को बडे पैमाने पर जनता के हित को प्रभावित करने वाली कोई भी बाधा और सार्वजनिक न्यूसेन्स पैदा करने से रोकना था। यह इसे एक आपराधिक कृत्य का मिश्रण नहीं देता है, क्योंकि यह एक सार्वजनिक भूमि संपत्ति पर एक व्यक्ति की कार्यवाही है। किसी व्यक्ति पर अपराध का कार्य नहीं है।

14. हालांकि, द्वारा 133 सी0आर0पी0सी0 के तहत दिया गया स्पष्टीकरण द्वारा 133 सी0आर0पी0सी की को लागू करता है केवल संपत्ति जो सार्वजनिक स्थान के क्षेत्र में आती है और उस संपत्ति पर लागू नहीं होगी जो अन्यथा अपने स्वयं के स्त्रोतों से किसी व्यक्ति विशेष रूप से खरीदी संपत्ति होती है और निजि संपत्ति के रूप में दर्ज की जाती है। और तदनुसार राजस्व रिकार्ड की जाती है। उक्त स्थिति इसलिये जैसा कि पहले ही ऊपर उल्लेख किया गया है यहां पुनरीक्षणवादी पंजीकृत बिक्री विलेख दिनांक 08 अप्रैल, 2002 के आधार पर संपत्ति का खरीददार है, और वह राजस्व रिकॉर्ड में भूमि राजस्व अधिनियम, 1901 के तहत उचित कार्यवाही के बाद दर्ज है, जो कि 1416 से 1421 तक की फसली से संबधित खतौनी से स्पष्ट है कि इस प्रकार इस न्यायालय का विचार है कि एक बार संपत्ति धारा 129 के तहत (ZALR अधिनियम की श्रेणी 01 क) निजी संपत्ति के रूप में दर्ज हो जाती है, इसे धारा 133 सी0आर0पी0सी0 के तहत निहित स्पष्टीकरण से बाहर रखा जायेगा। इस प्रकार सिविल प्रक्रिया संहित 1973 के उक्त प्रावधानों को लागू करके सी0आर0पी0सी0 की धारा 133 के तहत शिकायत दर्ज करके कार्यवाही नहीं की जानी चाहिए थी।

15. श्री पवन मिश्रा, प्रतिवादी सं0 02 के विद्वान अधिवक्ता द्वारा रिकॉल आवेदन की व्यवहार्यता के सम्बन्ध में की गई आपत्ति पर वापस लौटाते हुए, पुनरीक्षणकर्ता के विद्वान अधिवक्ता ने कथन किया कि कार्यवाही के तहत कार्यवाही से निपटने के लिए अपेक्षित प्रक्रिया धारा 133 सी0आर0पी0सी0 मे सम्बन्धित पक्षों के विस्तारित सबूतों का नेतृत्व करके एक लंबी प्रक्रिया से गुजरना आवश्यक नहीं है, जैसा कि नियमित सिविल कार्यवाही में आवश्यक है, विषय वस्तु पर प्रतिद्वंद्वी का दावा है और यदि ऐसा है, तो धारा 133 सी0आर0पी0सी0 के तहत कार्यवाही, एक संक्षिप्त कार्यवाही होगी और यह कहा जाता है कि यह एक सिविल प्रकृति का होगा, उस स्थिति में धारा 133 सी0आर0पी0सी0 के तहत पारित आदेश को वापस लेने की मांग करने वाला आवेदन पोषणीय होगा।

16. अपने तर्क के समर्थन में, पुनरीक्षणवादी के विद्वान अधिवक्ता ने **वसंत मंगा निकुम्बा और अन्य बनाम बाबूराव भीखन्ना नायडू और अन्य ने 1996 एससीसी (सीआरआई)27** में प्रस्तुत किया, जिसमें पैरा 3 में माननीय सर्वोच्च न्यायालय ने निम्नानुसार रखा हैः–

'' 3. न्यूसेन्स एक ऐसी असुविधा है जो भौतिक रूप से मानव अस्तित्व के सामान्य भौतिक आराम में हस्तक्षेप करती है। यह सटीक परिभाषा के लिए सक्षम नहीं है। यह सार्वजनिक या निजी न्यूसेन्स हो सकता है। जैसा कि धारा 268 में परिभाषित किया गया है। आई0पी0सी0 सार्वजनिक न्यूसेन्स जनता कि खिलाफ एक अपराध है, या तो ऐसा कुछ करना जो पूरे समुदाय को सामान्य रूप से परेशान करता है या ऐसा कुछ भी करने की उपेक्षा करता है जिसके लिए सामान्य भलाई की आवश्यकता होती है। यह एक ऐसा कार्य या चूक है जो जनता के लिए या आसपास के क्षेत्र में रहने वाले या संपत्ति पर कब्जा करने वाले लोगों के लिए किसी भी सामान्य चोट, खतरे या झुंझलाहट का कारण बनता है। वैकल्पिक रूप से यह उन व्यक्तियों को चोट, बाधा, खतरा या झुंझलाहट का कारण बनता है जिनके पास सार्वजनिक अधिकार को उपयोग करने का अवसर हो सकता है। यह निजी न्यूसेन्स के विपरीत झुंझलाहट या असुविधा की मात्रा है जो एक व्यक्ति को प्रभावित करती है जो निर्णायक कारक है। धारा 133 के पीछे उद्देश्य और सार्वजनिक उद्देश्य सार्वजनिक न्यूसेन्स को रोकने के लिए है कि यदि मजिस्ट्रेट धारा 133 का तत्काल सहारा लेने में विफल रहता है तो जनता को अपूरणीय क्षति होगी। रिकॉर्ड पर साक्ष्य से दिए गए तथ्यों और परिस्थितियों के व्यावहारिक विचार पर निष्पक्ष रूप से प्रयोग की जाने वाली शक्ति का प्रयोग विवेकपूर्ण विवेक में एक होना चाहिए। धारा 133 के तहत कार्यवाही का उद्देश्य निजी विवादों को निपटाना या दीवानी विवादों को निपटाने का इरादा नहीं है, हालांकि धारा 133 के तहत कार्यवाही संक्षिप्त प्रकृति में दीवानी कार्यवाही की प्रकृति में अधिक है।''

17. अपने स्पष्ट शब्दों में, माननीय सर्वोच्च न्यायालय ने माना कि धारा 133 सी0आर0पी0सी0 के तहत कार्यवाही सिविल प्रकृति की है और संक्षिप्त प्रकृति की है।

18. **काचरूलाल भागीरथ अग्रवाल और अन्य बनाम महाराष्ट्र राज्य और अन्य (2005)9 एससीसी 36** के मामले में माननीय सर्वोच्च न्यायालय द्वारा समान अनुपात निर्धारित किया

गया है। विशेष रूप से, वह अनुपात जो माननीय सर्वोच्च न्यायालय द्वारा कथित निर्णय के पैरा 10 में प्रतिपादित किया गया है, जो सिद्धांतों को दोहराता है कि यह एक दीवानी कार्यवाही होगी।

''10''। धारा 133 के तहत कार्यवाही एक संक्षिप्त प्रकृति की है। यह संहिता के अध्याय X के एक भाग के रूप में प्रतीत होती है जो सार्वजनिक व्यवस्था और शांति बनाए रखने से संबंधित है। अध्याय को चार श्रेणियों में वर्गीकृत किया गया है। धारा 129 से 132 ''गैरकानूनी सभाओं'' की श्रेणी के आती है। धारा 133 से 143 ''सार्वजनिक न्यूसेन्स'' की श्रेणी में आती है। धारा 144 ''न्यूसेन्स या आशंकित खतरे के तत्काल मामलों'' की श्रेणी में आती है और अंतिम श्रेणी में ''अचल संपत्ति के रूप में विवाद'' से संबंधित धारा 145 से 149 शामिल हैं। न्यूसेन्स दो प्रकार के होते हैं अर्थात (I)सार्वजनिकः और (ii)निजी। भारतीय दण्ड संहिता, 1860 की धारा 268 में परिभाषित ''सार्वजनिक न्यूसेन्स'' या ''सामान्य न्यूसेन्स'' आपराधिक कानून के तहत तीन उपचार हैं। पहला आई0पी0सी0 अध्याय XIV के तहत अभियोजन से संबंधित है। दूसरा कोड की धारा 133 से 144 के तहत संक्षिप्त कार्यवाही प्रदान करता है, और तीसरा विशेष या स्थानीय कानूनों के तहत उपचार से संबंधित है। धारा *133 की उप*–धारा (2)यह मानता है कि इस धारा के तहत एक मजिस्ट्रेट द्वारा विधिवत किए गए किसी भी आदेश को किसी भी सिविल कोर्ट में प्रश्नगत नहीं किया जाएगा। संहिता के अध्याययय X के प्रावधानों को इस प्रकार कार्यान्वित किया जाना चाहिए कि वे बडे पैमाने पर समुदाय के लिए बाधा न बनें। यद्यपि प्रत्येक व्यक्ति अपनी संपत्ति का इस प्रकार उपयोग करने के लिए बाध्य है कि इससे उसके पडोसी को कानूनी नुकसान या नुकसान न हो, फिर भी दूसरी ओर, किसी को भी दूसरे की संपत्ति के स्वतत्र और पूर्ण आनंद में हस्तक्षेप करने का अधिकार नहीं है, सिवाय इसके कि स्पष्ट और पूर्ण प्रमाण पर कि उसके द्वारा इसका ऐसा उपयोग इस तरह के कानूनी हानि या नुकसान का उत्पन्न कर रहा है। इसलिए, एक वैध और आवश्यक व्यापार में तब तक हस्तक्षेप नहीं किया जाना चाहिए जब तक कि यह समुदाय के स्वास्थय या शारीरिक आराम के लिए हानिकारक साबित न हो। धारा 133 के तहत कार्यवाही जनता कि विभिन्न सदस्यों के बीच निजी विवादों को निपटाने का इरादा नहीं हैं। वे वास्तव में जनता को असुविधा के खिलाफ पूरी तरह से बचाने के लिए हैं। संहिता की धारा 133 और 144 के प्रावधानों के बीच तुलना से पता चलता है कि पूर्व अधिक विशिष्ट है, बाद वाला अधिक सामान्य है। इसलिए, पूर्व खंड में विशेष रूप से प्रदान किए गए उपद्रव को बाद के खंड के सामान्य प्रावधानों से बाहर रखा

गया है। धारा 133 के तहत कार्यवाही आपराधिक प्रकृति की तुलना में सिविल कार्यवाही की प्रकृति में अधिक है। धारा 133(1)(बी)व्यापार या व्यवसाय से संबंधित है जो स्वास्थय या शारीरिक आराम के लिए हानिकारक है। यह स्वयं समुदाय को भौतिक सुख–सुविधाओं से संबंधित है न कि उन कार्यों से जो अपने आप में न्यूसेन्स नहीं हैं बल्कि जिसके दौरान सार्वजनिक न्यूसेन्स किया जाता है। इस खंड के संचालन के भीतर एक व्यापार लाने के लिए, यह दिखाया जाना चाहिए कि जनता के आराम के साथ हस्तक्षेप काफी था और जनता का एक बडा हिस्सा हानिकारक रूप से प्रभावित हुआ था। धारा 133(1) के खंड (बी)में ''समुदाय'' शब्द किसी विशेष घर के निवासियों का मतलब नहीं लिया जा सकता है। इसका मतलब कुछ व्यापक है, यानी बड़े पैमाने पर जनता या पूरे इलाके के निवासी। तथ्य यह है कि प्रावधान ''सार्वजनिक न्यूसेन्स'' वाले अध्याय में होता है, इस पहलू का संकेत है। हालांकि, यह प्रत्येक मामले की तथ्यों की स्थिति पर निर्भर करेगा और किसी भी कठोर सूत्र को निर्धारित करना खतरनाक होगा।''

19. अंत में पुनरीक्षणवादी के विद्वान अधिवक्ता ने विधिनिर्णय **मध्यप्रदेश राज्य बनाम केडिया लेदर एण्ड लिकर लिमिटेड और अन्य ने 2003 एससीसी (सीआरआई)1642** प्रस्तुत किया, जिसमें पैरा 8 और 9 में न्यायालय ने निम्नानुसार अवधारित किया है:

''7. अपीलकर्ता के विद्वान अधिवक्ता ने कथन किया कि उच्च न्यायालय द्वारा व्यक्त किया गया विचार कानूनी रूप से मान्य नहीं है। तीन कानूनी अलग–अलग क्षेत्रों में काम करते हैं और भले ही कुछ मात्रा में अतिव्यापी हो सकते हैं, वे सह–अस्तित्व में हो सकते हैं। एक सांविधिक प्रावधान को न्यायालय द्वारा अप्रत्यक्ष रूप से निरस्त नहीं किया जा सकता है। प्रतिवादी इकाईयों के विद्वान अधिवक्ता ने कथन किया कि इस न्यायालय के पास 02.01.2001 को अंतरिम आदेश पारित करने का अवसर था। मध्य प्रदेश प्रदूषण नियंत्रण बोर्ड (संक्षेप में ''बोर्ड'') के कामकाज के तरीके को अपवाद बनाया गया और अपचारी अधिकारियों के खिलाफ आवश्यक कार्यवाही करने के निर्देश दिए गए। कार्यवाही शुरू की गई और पुनर्गठित बोर्ड के कार्यकर्ताओं द्वारा दायर रिपोर्टों के आधार पर कानखानों का कामकाज बंद कर दिया गया था। कार्यवाही की वैधता और उसमें पारित आदेशों पर सवाल उठाए गए हैं और बोर्ड को कारखानों को कार्यात्मक बनाने के लिए आवश्यक अनुमति देने

के लिए भेजा गया है। इस पृष्ठभूमि में यह प्रस्तुत किया जाता है कि उठाए गए मुद्दे वास्तव में अकादमिक सम्बन्धी हो गए हैं, हालांकि, अपीलकर्ता राज्य और बोर्ड के विद्वान अधिवक्ता ने स्थिति को तथ्यात्मक रूप से सही स्वीकार किया, लेकिन यह प्रस्तुत किया जाता है कि निर्णय के प्रभाव पर विचार करते हुए जिसके दूरगामी परिणाम होंगे, कानूनी मुद्दों पर निर्णय लिया जा सकता है और उचित निर्देश दिए जाने चाहिए ताकि जहां तक कारखानों के कामकाज का बंद होने के पहलू का संबंध है।

8. संहिता की धारा 133 के अध्याय X जो सार्वजनिक व्यवस्था और शांति बनाए रखने से संबंधित है। यह ''सार्वजनिक न्यूसेन्स'' शीर्षक का एक हिस्सा है। कानून में प्रयुक्त ''न्यूसेन्स'' शब्द सटीक परिभाषा के लिए सक्षम शब्द नहीं है और इंग्लैंड के हल्सबरी के कानूनों में यह बताया गया है किः

''यहां तक कि वर्तमान समय मे भी इस बात पर पूर्ण सहमति नहीं है कि क्या कुछ कार्यों या चूक को उपद्रव के रूप में वर्गीकृत किया जाएगा या क्या वे यातना के कानून के अन्य प्रभागों के अंतर्गत नहीं आते हैं।''

**वसंत मंगा निकुम्बा बनाम बाबूराव भीखन्ना नायडू, 1996 एससीसी (सीआरआई)27** में, यह देखा गया कि न्यूसेन्स एक असुविधा है जो भौतिक रूप से मानव अस्तित्व के सामान्य भौतिक आराम में हस्तक्षेप करती है। यह सटीक परिभाषा देने में सक्षम नहीं है। संहिता की धारा 133 को लागू करने के लिए, संपत्ति के लिए आसन्न खतरा और जनता कि लिए परिणामी न्यूसेन्स होना चाहिए। न्यूसेन्स सहवर्ती कार्य है जिसके परिणामस्वरूप संभावित पतन आदि के कारण जीवन या संपत्ति को खतरा होता है। धारा 133 के पीछे संहिता का उद्देश्य अनिवार्य रूप से सार्वजनिक न्यूसेन्स को रोकने के लिए है और इसमें इस अर्थ मे अत्यावश्यकता की भावना शामिल है कि यदि मजिस्ट्रेट सहारा लेने में विफल रहता है तो जनता को तुरंत अपूरणीय क्षति होगी। यह उस समय न्यूसेन्स की स्थिति पर लागू होता है जब आदेश पारित किया जाता है और यह भविष्य की संभावना पर लागू करने का इरादा नहीं है या बाद के समय में क्या हो सकता है। यह सभी संभावित न्यूसेन्सों से निपटता नहीं है, और दूसरी ओर तब लागू होता है जब न्यूसेन्स मौजूद होता है। यह ध्यान रखना होगा कि कभी–कभी संहिता की धारा 133 और धारा 144 के बीच भ्रम होता है। जबकि बाद वाला अधिक सामान्य प्रावधान है, पूर्व अधिक विशिष्ट है। जबकि पूर्व के तहत

आदेश सशर्त है, बाद वाले के तहत आदेश पूर्ण है। कार्यवाही आपराधिक कार्यवाही की तुलना में सिविल कार्यवाही की प्रकृति में अधिक है।''

20. इसलिए, माननीय सर्वोच्च न्यायालय द्वारा निर्धारित अनुपात को ध्यान में रखते हुए, यह एक अनिवार्य निष्कर्ष की ओर जाता है कि सी0आर0पी0सी0 की धारा 133 के तहत कार्यवाही चूंकि एक सार्वजनिक सम्पत्ति पर न्यूसेन्स को रोकने और कम करने से निपटने के लिए प्रकृति में संक्षिप्त होने के नाते यह एक दीवानी प्रकृति के रूप में अयोजित किया गया है और एक ऐसी शक्ति है, जिसका प्रयोग कार्यकारी अधिकारी द्वारा प्रयोग किया गया है। जैसा कि धारा 133 के तहत निहित है, इसलिए यह स्वयं एक दीवानी कार्यवाही होगी। यदि ऐसा है तो स्पष्ट रूप से दीवानी कार्यवाहियों के तहत, एकपक्षीय तरीके से एक आदेश पारित करने वाले अधिकारियों के पास स्वयं उस आदेश को वापस लेने की एक अंतर्निहित शक्ति होगी जो न्याय के लक्ष्यों को पूरा करने के लिए पारित किया गया है और एक प्रभावी गुणदोष अधिनिर्णय भी है।

21. नतीजन, यह न्यायालय मानता है कि पुनरीक्षणकर्ता के रिकॉल प्रार्थना पत्र पर सब डिविजनल मजिस्ट्रेट द्वारा पारित दिनांक 03.03.2010 का आदेश, एकपक्षीय आदेश को वापस लेने की मांग किसी भी स्पष्ट कानूनी दोषों से ग्रस्त नहीं था। अतः वर्तमान पुनरीक्षण स्वीकार की जाती है। 2006 के आपराधिक पुनरीक्षण संख्या 19, छोटे लाल बनाम विद्वान अतिरिक्त जिला न्यायाधीश/एफओसी II देहरादून द्वारा पारित आक्षेपित आदेश दिनांक 02.11.2010 उत्तराखण्ड राज्य और अन्य को रद्द कर दिया गया है।

22. हालांकि, लागत के संबंध में कोई आदेश नहीं होगा।

**(शरद कुमार शर्मा, जे,)**
17.11.2018